पञ्चमूर्ति शिव

– डॉ. धीरेन्द्र झा, दरभंगा

वैदिक विज्ञान में परतत्त्वों में सर्वप्रथम अव्ययपुरुष को प्रधान माना गया है । अव्ययपुरुष की पाँच कलाये हैं – आनन्द, विज्ञान, मन, प्राण और वाक् । इन पाँचो कलाओं अधिष्ठाता भगवान शिव के पाँच रुप हैं । आनन्दमय शिव रुप की मृत्यंजय के नाम से उपासना होती है; क्योंकि ''रस'' स्वयं आनन्द रुप है । और बल जिसका नाम ''मृत्यु'' भी है, उस आनंद को अन्त कर देता है । मृत्यु (बल) का जय करने से मन आनंद का प्रकटीकरण जिनके द्वारा होता है – वे आनंद रुप शिव मृत्युंण्जय हैं । उनकी द्वितीय कला विज्ञानमय शिवमूर्ति की ''दक्षिणामूर्ति'' के नाम से प्रसिध्द है । ''विज्ञान'' बुद्धि का नाम है उसका घन ''सूर्यमंडल'' है । सूर्यमंडळ से ही विज्ञान समस्त प्राणियों में व्याप्त होता है । शिव की यह विज्ञानमूर्ति दक्षिणामूर्ति वर्णमातृका पर प्रतिष्ठित है । इस विज्ञान का आधार वर्णमातृका है । अत: शिव को दोनों ही मृत्यंजय व दक्षिणामूर्ति रुप प्रकाश प्रधान होने के कारण ''श्वेत वर्ण'' माने जाते है । तृतीय मनोमय कला के अधिष्ठाता ''कामेश्वर'' शिव है । मन काम प्रधान है – '''कामस्तदग्रे समवर्त्तताधि मनसो रेत: प्रथम: यदासीत् । सतो बन्धुमसति निरविन्दन हृदि प्रतीस्या कवयो मनीषा ।।'' (ऋ. १०/१२९/४)

इस कारण इनका नाम ''कामेश्वर'' है क्योंकि ये समस्त कामनाओं की पूर्ति करते हैं । यह कामेश्वर मूर्ति तन्त्रों में रक्तवर्ण मानी गई है । चौथी कला प्राणमय मूर्ति ''पशुपति'' नीललोहितादि नामों से जानी जाती है । यह शिव की पंचमुखी मूर्ति है । आत्मा–पशुपति प्राण–रुप पाश के द्वारा विकार रुप पशुओं का नियमन करता है अत: प्राणमय मूर्ति को ''पशुपति'' कहा जाता है । वैदिक विज्ञान में (छान्दोग्योपनिषद प्रपा–६ ख. ४) कहा गया है कि :– ''यदग्ने रोहितं रुपम्,''तेजसस्तद्रूपम'' ''यच्छुक्लं तदपाम्'' यत्कृष्णं तदन्नस्य अर्थात सोम ही अन्न होता है अत: शिव की यह मूर्ति ''नीललोहित कुमार'' नाम से भी जाना जाता है । इस सोम व अन्न के सम्मिश्रण से पाँच रुप बनते है, इसलिए पाँच वर्ण के पाँच मुखों का ध्यान शिव का मूर्ति ध्यान कहा गया है :–

''मुक्तापीतपयोदमौक्तिक जपावर्णैर्मुखै: पञ्चमिस्त्र्यक्षैरञ्चितमीशमिन्दु मुकुटं पूर्णेन्दुकोटिप्रभम् । शूलं टंकणपाणिवज्रहननान्नागेन्द्र घण्टाङ्कुशान् । पाशं भीतिहरंदधानममिताकल्पोज्जवलाङ्गंभजे ।।''

इस पंचमुखी शिव मूर्ति का एकमुख सबके ऊपर है और चार मुख चारों दिशाओं में । ऊर्ध्वमुख ईशान नाम से, पूर्वमुख ''तत्पुरुष'' नाम से, दक्षिण ''अघोर'' नाम से, उत्तर मुख ''वामदेव'' नाम से और पश्चिम ''सघोजात'' नाम से पुकारा व पूजा जाता है । पाँचवी कला वाङ्मय मूर्ति ''भूतेश'' के नाम से जाना जाता है । यही भूतेश शिव अवर मूर्ति माने जाते हैं । अंतरिक्ष की वायु को रुद्र कहा जाता है । रुद्र शिव का ही अवतार माना जाता है । रुद्र रुप वायु अग्निप्रधान व सोमप्रधान होता है । अग्निप्रधान वायु ''भुव:'' अंतरिक्ष में तथा सोम प्रधान वायु जन: तप: लोकों में रहती है । अंतरिक्षस्थ वायु को रौद तथा परमेष्ठिमण्डलस्थ वायु को ''साम्ब सदाशिव'' कहलाती है । ऐतरेयब्राह्मण में अग्नि

को ही ''रुद्र'' कहा गया है :- अग्निर्वा रुद्र: तस्य द्वैतन्वौ घोरान्या च शिवान्या च'' अग्निमिश्रित वायु को रुद्र कहते है । रुद्र नामक अग्नि के दो रुप हैं - घोर और शिव । आगे सूर्य से ऊपर के जन और तप लोकों की वायु सदा ही कल्याणकारक है, इसलिए असे ''सदाशिव'' कहते है । सोम की स्थूल अवस्था जल है वैदिक भाषा में जल का ''अम्बा'' भी है । इसलिए सोमप्रधान वायु को ''साम्ब सदाशिव'' कहा जाता है अत: घोर रुप रुद्र से वेद में प्रार्थना की गयी है कि :- ''मानस्तोके तनये मान आयु: मानो गोषुमानो अश्वेषु रिरीष: ।मानो वीरान् रुद्रभामिनो वधीरेहविष्मन्त: सदमित्वा हवामहे ।। ये रुद्र ग्यारह है । शतपथब्राह्मण १४ काण्ड अ.५ब्राह्मण ९ में शाकल्य और याज्ञवल्क्य के प्रश्नोत्तर में देवता निरुपण में (दशेमे पुरुषे प्राणा: आत्मैकादश:) पुरुष के दस प्राण और ग्यारहवाँ आत्मा आध्यात्मिक रुद्र बताये गये है । दस प्राणों की व्याख्या श्रुति में इस प्रकार है :- ''सप्त शीर्षण्या: प्राणा:द्राववाञ्चौ, नाभिर्दशमी । अर्थात, मस्तक में रहनेवाले सात प्राण, दो आँख, दो नाक, दो कान और एक मुख नीचे के दो प्राण मलमूत्र त्यागने के दो द्वार और दसवीं नाभि अन्तरिक्षस्थ वायुप्राणही हमारे शरीरों में प्राण रुप होकर प्रविष्ट है और वे ही इन दसों स्थानों में कार्य करते है । ग्यारहवाँ प्राणात्मा ही यहाँ विवक्षित है । आधिभौतिक रुद्र, पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश, सूर्य चन्द्रमा विद्युत पवमान, पावक और शुचि बताये गये है । इनमें आदिके आठ शिव की अष्टमूर्ति कहलाते हैं । इनमें शुचि सूर्य में, पवमान अंतरिक्ष में और पावक पृथ्वी पर कार्य करता है । आधिदैविक रुद्र एकादश तारा मण्डलों में रहते हैं इनके कई नाम भिन्न - भिन्न रुप से मिलते हैं — १) अज एकपात् २)अहिर्बुध्न्य ३) विरुपाक्ष ४) त्वष्टा, ५) रैवत, भैरव, कपर्दी व वीरभद्र ६) हर, नकुलीश, पिंगल वा स्थाणु ७) बहुरुप, सेनानी वा गिरीश ८) त्र्यम्बक, भुवनेश्वर, विश्वेश्वर वा सुरेश्वर ९) सवित्र, भूतेश व कपाली १० जयन्त, वृषाक विशंभु वा सन्ध्य और ११) पिनांकी मृगव्याध, लुब्धक या शर्व । इसी प्रकार यज्ञ में ग्यारह अग्नियाँ होती है, इनमें प्रथम तीन अग्नियाँ है — गार्हपत्य, आहवनीय, धिष्ण्य । इनमें गार्हपत्य के दो भेद हो जाते हैं । इष्टि में जो गार्हपत्य था वह सोमयाग में पुराण गार्हपत्य कहलाता है और इष्टि के आहवनीय को सोमयाग में गार्हपत्य बना लेते हैं । यह नूतन गार्हपत्य कहलाता है । धिष्ण्याग्नि के ८ भेद है जिनके नाम वेदों में आग्निघ्रीय अच्छावाकीय, नेष्ट्रीय पोष्टत्रीय ब्राम्हणाच्छसीय, होत्रीय प्राशास्त्रीय और भार्जालीय हैं । आहवनीय एक ही प्रकार का है, ये भी एकादश रुद्र के रुप में प्रसिध्द है । ये शिव रुप ही यज्ञ में ग्राह्य है । श्वेताश्वतर उपनिषद में कहा गया है कि :—

''सर्वानन शिरोग्रीव: सर्वभूतगुहाशय: सर्वव्यापी स भगवांस्तस्मात सर्वगत: शिव: ।।'' मुण्डकोपनिषद (२/१/४) में शिव के व्यापक स्वरुप का वर्णन करते हुए कहा गया है कि :—

''अग्निर्मूर्धा चक्षुषी चन्द्रसूर्यौ दिश: श्रोत्रे वाग् विवृताश्च वेदा :
वायु: प्राणो हृदयं विश्वमस्य पदभ्यां पृथिवी ह्येव सर्वभूतान्तरात्मा ।।''

अर्थात अग्नि जिसका मस्तक है, चन्द्रमा सूर्य दोनो नेत्र हैं, दिशाएँ श्रोत्र हैं, वेद वाणी है, विश्वव्यापी वायु प्राण रुप से हृदय में है, पृथ्वी पाद-रुप है — वह शिव सर्वव्यापी और सब भूतों की अन्तरात्मा है

। पद्मपुराण में पृथ्वी का पद्मरुप में निरुपण किया है और शंकर का ध्यान पद्मासन स्थित रुप में है यथा :– ''पद्मासीनं समन्तात स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिवसानं विश्वाद्यं विश्वबीजं निखिल भयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ।।'' शिव के इस विशिष्ट स्वरुप का वर्णन कुमारसंभव में कविकुलगुरु कालिदास ने पार्वती के मुख से कहलवाया है :— ''विभूषणोद्भासि भुजङ्गभोगिवागजाजिनालम्बिदुकूलवारिवा । कपालि वा स्यादथवेन्दुशेखरं न विश्वमूर्त्तैखधार्यते वपू: ।।'' इस प्रकार शिव पञ्चमूर्ति है किन्तु इनकी महिमा सर्वत्र व्याप्त है । इत्यलम् ।

डॉ. धीरेंन्द्र झा प्रधानाचार्य
सरस्वती विद्या मंदिर
एस. पी. कोठी के पास
कालेज रोड, गया (बिहार)